JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

हिंदी उपन्यास साहित्य में विभिन्न विमर्श

प्रो. डॉ बाळासाहेब सोनवणे

हिंदी विभाग प्रमुख,

डॉ अरविन्द ब तेलंग वरिष्ठ महाविद्यालय निगडी पुणे – ४४

प्रस्तावना : 21वीं सदी में जगत की प्रत्येक घटना चर्चा के केंद्र में है। अतः कहना गलत नहीं होगा कि आज का समय विमर्शों का समय है। दलित, स्त्री, आदिवासी, किन्नर, अल्पसंख्यांक, विकलांग, मुस्लिम, किसान आदि समूह परिधि को छोड़कर हिंदी साहित्य केंद्र में आ चुके हैं। सीमित समूह और विषयों में अटका हिंदी साहित्य 21वीं सदी में सूचना एवं प्रौद्योगिकी के के विकास के साथ ही अपनी सीमाओं को विस्तृत करता हुआ समाज के अंतिम समूह तक फैलता गया है। इसी फैलाव से उपजे विभिन्न विमर्श अंधेरे में भटकते समूह को राह दिखाकर उनके दुख और दर्द को वाणी दे रहे हैं। इसलिए 21वीं सदी विमर्शों की सदी है या आज का समय विमर्शों का समय है।

आधुनिक हिंदी साहित्य में या 21वीं सदी के हिंदी साहित्य में वेदना, विद्रोह और नकार के साथ विमर्श की चर्चा आरंभ हुई जिसे साहित्य जगत में दलित साहित्य के नाम से जाना और पहचाना जाता है। समाज से प्रताड़ित अपमानित और शोषित समाज का चित्रण दलित साहित्य के नाम से प्रकाशित होता गया और साहित्य जगत में चर्चा के केंद्र में दलित साहित्य या दलित विमर्श रहा। किसी भी विमर्श का आरंभ कविता से हुआ है किंतु प्रस्तुत आलेख में उपन्यासों पर चर्चा है। 'हिंदी दलित उपन्यास सामाजिक संरचना की तरह में जाकर पूरे समाज की न केवल पड़ताल करता है बल्कि उसमें छुपी हुई विसंगतियों को उजागर कर उसके प्रतिकार और परिष्कार का प्रयत्न भी करते हैं। 'सूअरदान' उपन्यास जातिवाद ऊंच नीच की भावना को उजागर करते हुए इसका इलाज करने का संदेश देता है। हिंदी दलित उपन्यास समाज में समता व स्वतंत्रता के पक्षधर है। मनुष्य की अस्मिता एवं सम्मान को सर्वोपरि मानते हैं। भारतीय समाज दलितों की विपन्नता, निरक्षरता, उत्पीड़न, हीनताबोध, गरीबी दुख का कारण है। क्योंकि भारतीय समाज व्यवस्था ने दलितों पर जो अन्याय, अत्याचार हो रहे हैं, उसे समर्थन दिया था। इसी समर्थन के विरोध में छप्पर, मुक्ति पर्व, डंक, सूअरदान जैसे उपन्यास आवाज उठा रहे हैं। वही विमर्श बनकर साहित्य के केंद्र में हैं।

औद्योगिकीकरण अपने चरम सीमा पर है और विकास के नाम पर आदिवासी समुदाय को उसके मूलभूत आवश्यकताओं जल, जंगल, जमीन से बेदखल किया जा रहा है। प्रश्न उनके अस्तित्व का ही नहीं तो अब संस्कृति का भी है। इसी बात को केंद्र में रख कर आदिवासी विमर्श 'मनोबल गांव के देवता' में उद्घाटित हुआ है। आदिवासी समुदाय का निवास जंगल आज खतरे में है। विकास के नाम पर उनका विस्थापन किया जा रहा है। भूमंडलीकरण के इस दौड़ में संजीव अपने धार, 'सावधान नीचे आग है', जंगल जहां शुरू होता है, मोहन पाठक का उपन्यास गगन घटा घहरानी है, भगवान दास मोरवाल का 'काला पहाड़', रामचीज सिंह कृत 'वन विहंगिनी' जैसे कई आदिवासी उपन्यास आदिवासियों के जीवन को चित्रित करते हुए आदिवासी विमर्श को और अधिक विकसित कर रहे हैं।

सन 1942 में फ्रेंच समीक्षक सीमोन द बोनुवार की 'द सेकंड सेक्स' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई और नारी मुक्ति या स्त्री विमर्श की चर्चा आरंभ हुई। सीमोन के क्रांतिकारी विचारों से दुनिया की सभी नदियां प्रकाशित हुई और उन्होंने अपनी लड़ाई लड़ते हुए अपनी मुक्ति के द्वार खोलें। हिंदी रचना जगत की अनेक महिला उपन्यासकारों ने अनेक उपन्यास लिखकर स्त्री

विमर्श की चर्चा कायम रखी। मैत्रीय पुष्पा कृत 'बेतवा बहती रही', नमिता सिंह कृत 'अपनी सलीके', चित्रा मुद्गल कृत 'एक मीन अपनी', 'एक जमीन अपनी', 'मुझे चांद चाहिए' जैसे दर्जनों उपन्यासों में स्त्री विमर्श झलकता है।

विकलांगता की शिकार देश -विदेश में दार्शनिकों, साहित्यकारों, कलाकारों और खिलाड़ियों में पाए जाते हैं। परंतु उनकी भी इच्छा, जिजीविषा, आत्विमविश्वास, जीवन राग और अभ्यास के बल पर दुनिया बदलने की ताकत उनमें होती है। जाहिर है प्रोत्साहन, परामर्श और हिम्मत के बलबूते विकलांगों द्वारा महान कार्य करते हुए समाज विकास में अद्वितीय योगदान दिया है। दलित एवं स्त्री विमर्श में जो वातावरण बना है उससे उनकी स्थिति पहले से काफी बेहतर हुई है। इसे देखा देखी शारीरिक अथवा मानसिक विकलांग व्यक्ति को अधिक सशक्त, क्रियाशील एवं कार्य कौशल चित्रित करते हुए भीतरी शक्ति को उद्घाटित किया है। इसे पढ़ते हुए विकलांग व्यक्ति में जीने की इच्छा शक्ति जागृत होती है। यही चित्र हिंदी उपन्यासों में विकलांग विमर्श को अधिक सशक्त प्रस्तुत करता है। और विकलांग केंद्रित उपन्यास विकलांग विमर्श की नींव स्थापित करता है।

वर्तमान समय में विकलांगता विडंबना न बनकर वैज्ञानिक आविष्कार द्वारा अच्छे उपचार लेकर आत्मनिर्भर बन सकते हैं। विकलांग वर्ग समाज पर अनावश्यक बोझ नहीं बल्कि एक मजबूत और सशक्त हिस्सा बन रहा है। विकलांग विमर्श की सुदीर्घ परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है। वर्तमान 21वीं सदी में भी हिंदी उपन्यासों में विकलांग विमर्श का चित्रण मिलता है जो जीवन की नई राह निर्माण करता है।

अभी विमर्शों के तहत किन्नर विमर्श भी इक्कीसवीं सदी में चर्चा के केंद्र में है। किन्नर समाज एक ऐसा समुदाय है जो समाज के बीचों बीच उपस्थित है लेकिन उसका कोई अस्तित्व नहीं है। यह समाज सभ्य समाज में तिरस्कार और अपमान का अंश झेलने के लिए विवश है। किन्नर उपहास के पात्र हैं। किन्नर समुदाय को तरह-तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है इसीलिए उन्होंने संवैधानिक रूप से अपना अधिकार पाने का प्रयास शुरू किया है। महेंद्र भीष्म द्वारा लिखित 'किन्नर कथा' (2011), प्रदीप सौरभ कृत 'तीसरी ताली'(2014), चित्रा मुद्गल कृत 'पोस्ट बॉक्स नंबर 203 नाला सोपारा'(2016) आदि उपन्यासों में किन्नरों के दुख उद्घाटित हुए हैं।

भारतीय अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार कृषि और किसान है। किसानों की उन्नति से ही देश की उन्नति संभव है। किसान पूरे भारत देश का अन्नदाता है। वैश्वीकरण के दौड़ में किसानों की स्थिति में और अधिक सुधार होना आवश्यक है किंतु सामाजिक तथा राजनीतिक उदासीनता के कारण उन्हें बिजली, खाद और पानी जैसी अनेक समस्याएं परेशान कर रही है। कर्ज तथा शोषण किसानों में निराशा पैदा करता है और वह आत्महत्या का मार्ग अपनाते हैं। देश का अन्नदाता आत्महत्या करें तो अन्य समाज का भविष्य क्या होगा? आदि का चित्रण पंकज सुबिर कृत 'अकाल में उत्सव', संजीव कृत 'फांस', शिवमूर्ति कृत 'आखिरी छलांग' उपन्यासों में हुआ है। वर्तमान विभिन्न विमर्शों में किसान विमर्श भी अपने अलग आशय को लेकर हिंदी उपन्यास जगत में चर्चा के केंद्र में है।

वर्तमान विभिन्न विमर्शों में किसान विमर्श भी अपने अलग आशय को लेकर हिंदी उपन्यास जगत में चर्चा के केंद्र में है।

आज-कल हिंदी उपन्यास साहित्य में छोटे-मोटे अनेक विमर्श जन्म लेकर विकसित होते जा रहे हैं। जिससे छोटे-छोटे समूह जाति और वर्गों का प्रतिनिधित्व साहित्य जगत में उद्घाटित हो रहा है। उपरोक्त चर्चित विभिन्न विमर्शों के अलावा अनेक अल्पसंख्यांक विमर्शों की चर्चा आज हिंदी उपन्यास जगत में हो रही है। जिसमें आप मुस्लिम विमर्श, जैन विमर्श को देख सकते हैं। मंजूर एहतेशाम कृत 'बशारत मंजित तथा अन्य, अब्दुल बिस्मिल्लाह कृत अपवित्र आख्यान, अनवर सुह कृत 'पहचान' आदि उपन्यासों में मुस्लिम परिवेश का चित्रण हुआ है। साथ ही अन्य अल्पसंख्यांक समुदायों का प्रतिनिधिक साहित्य विमर्श के रूप में प्रस्तुत होना आवश्यक है।

निष्कर्ष : आज वर्तमान भूमंडलीकरण, सूचना प्रौद्योगिकी के विस्फोट के जमाने में भी समाज का काफी हिस्सा साहित्य जगत से दूर है। उन समुदायों पर लिखकर उनके दुख वेदना को रेखांकित करना होगा, तब सही अर्थ में हिंदी उपन्यास साहित्य जगत का विमर्श पूर्ण रूप धारण कर लेगा। इतना ही नहीं तो विभिन्न विमर्शों की समीक्षा या आलोचना के मानदंड भी धीरे-धीरे निश्चित करने होंगे, नहीं तो इक्कीसवीं सदी के यह विमर्श आज चर्चा के केंद्र में है। लेकिन उनका मूल्यांकन परंपरागत मानदंडों से हो तो फिर एक बार समुदाय के साथ-साथ उनके साहित्य पर भी अन्याय, अत्याचार होंगे, शोषण होगा और यह साहित्य मुख्य प्रवाह से बाहर कर दिया जाएगा।

संदर्भ ग्रंथ

1. इक्कीसवीं सदी का कथा साहित्य -संपा. डॉ. सुरैय्या शेख

2. आधुनिक हिंदी साहित्य विविध परिदृश्य - डॉक्टर पंडित बन्ने

3. अपनी माटी (इ- पत्रिका) दलित उपन्यासों में इतिहास एवं समाज बोध

4. हमरंग (पत्रिका) हिंदी उपन्यास और आदिवासी जीवन

5. अपनी माटी (इ-पत्रिका) नई सदी के हिंदी उपन्यास और किसान आत्महत्याएं- सचिन गपाट

6. हिंदी साहित्य एवं विकलांग विमर्श - आलेख,- डॉ. छोटे लाल गुफा

7. सागरिका (पत्रिका) समसामायिक हिंदी साहित्य : किन्नर विमर्श - डॉ. गुर्रम कोडा नीरजा

8. नई सदी के हिंदी उपन्यास और अल्पसंख्यांक विमर्श